मानवीय हृदय की पीड़ा का दस्तावेज़: आधा गाँव

Pardeep Kumar^{1*} Dr. Gyani Devi Gupta²

¹ Research Scholar, Gurukashi University, Talwandi Sabo, Bathinda, Punjab

² Head of Hindi Department, Assistant Professor, Gurukashi University, Talwandi Sabo, Bathinda, Punjab

सारांश – भारत का विभाजन, इस विभाजन का एक कारण साम्प्रदायिकता, हिन्दुओं और मुसलमानों का आपसी द्वेष, धर्म पर राजनीति, राजनीति का असर सभ्यता संस्कृति का हनन, पैदा हुए उन्माद के कारण साम्प्रदायिकता को तीव्र गति से बढ़ावा मिलने लगा, 'द्विराष्ट्रवादी-सिद्धान्त' की पेशकश, अंग्रेजों द्वारा मुसलमानों का पक्षधर बनना 'आधा गाँव' उपन्यास के माध्यम द्वारा राही मासूम रज़ा का एक प्रामाणिक साहित्यिक दस्तावेज़ लोगों तक पहुँचाना, गंगौली गाँव में शिया और सुन्नी मुसलमानों के साथ अन्य धर्म के लोगों के जीवन की झलक का मिलना, धर्म के नाम पर साम्प्रदायिकता का नंगा नाच होना, अमानवीय व्यवहार का प्रदर्शन, लोगों की धार्मिक आस्था पर प्रहार, द्वन्द्ववात्मक परिप्रेक्ष्य का राजनीति और समाज पर सीधा असर, मुस्लिम लीग के झूठे वायदों पर आधारित द्विराष्ट्रवादी-नीति, मुसलमानों का जन्मत के लिए, मुस्लिम लीग को वोट देना। भारत का विभाजन, पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तान का निर्माण, आतंक, अनीति और संत्रास भरा माहौल, मार-काट के पश्चात् बिछड़ों को खोजने की पीड़ा, खण्डित होते रीति-रिवाज, शोषण कर भ्रष्टाचार को बढ़ावा देना, संवेदनशीलता का अन्त, कुछेक भारतीय मुसलमानों का भारत से पलायन न करने का फैसला, मुसलमानों की विस्थापन की समस्या, विस्थापित मुसलमानों की मनोदशा, जन्मत प्राप्त न होने पर, मोहभंग की स्थिति, पीड़ित अवस्था में भारत में रहने का निर्णय, साम्प्रदायिकता के खिलाफ राष्ट्रीयता का पैगाम, कारुणिक घटनाओं का ब्यौरा पेश करते, मानवीय हृदय की पीड़ा का विवेचन कर लोगों की आँखों को खोलना ही इस शोध-पत्र का मुख्य प्रयोजन है।

बीज शब्द: भारत का विभाजन, पीड़ा, विभाजनोपरान्त मोहभंग की स्थिति

-----X-----

मूल प्रतिपादन:

भारत का विभाजन मानवीय इतिहास में करुणा की गाथा है। इस विस्फोट ने भारतीय इतिहास को उपहार के तौर पर पीड़ा भरी कहानियाँ भेंट कर डाली। विभाजन की त्रासदी का प्रभाव समाज, राजनीति, अर्थव्यवस्था, संस्कृति के साथ-साथ साहित्य पर भी पड़ा। जिसका जीवन्त दस्तावेज़ है, राही मासूम रज़ा का उपन्यास 'आधा गाँव' जो 1966 को प्रकाशित होकर सुविज्ञ पाठकों की संवेदनशीलता को आधुनिक गद्ययुग के मध्यवर्गीय नवीन चेतना युग के महाकाव्य उपन्यास के माध्यम से छूता है।[1] आलोच्य उपन्यास में विभाजन का मूल कारण साम्प्रदायिकता को माना गया है। साम्प्रदायिकता एक घातक भाववाचक संज्ञा शब्द है, जिसने समाज में अपनी चरम सीमा पर पहुँच कर समाज को गम्भीर रूप से भड़काया था, भड़का रही है, और, आने वाले समय में भी भड़काएगी। साम्प्रदायिकता की ज्वाला ने धर्म का बाणा पहन कर जवानों और बड़ों की चाल-ढाल बदल डाली है। हिन्दुओं, मुसलमानों

और सिक्खों को साम्प्रदायिकता ने अधिक प्रभावान्वित किया। साम्प्रदायवाद एक ऐसा हथियार है जो जनसमुदाय के सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक हितों को भी प्रभावित करता है। साम्प्रदायवाद पर विपिन चन्द्र अपना वक्तव्य इस प्रकार व्यक्त करते हैं। "साम्प्रदायवाद एक ऐसा विश्वास है जो सामान्य सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक हितों के लिए एक समूह द्वारा एक विशेष धर्म को स्वीकारने से पनपता है।"[2] इन्हीं विशेष हितों ने हिन्दुओं और मुसलमानों में द्वेषी भावना उत्पन्न करनी प्रारम्भ कर दी। साम्प्रदायवाद का असर धर्म और राजनीति पर पड़ने लगा। साम्प्रदायिकता से प्रभावित राजनीति ने भारतीय सभ्यता संस्कृति का हनन किया। समाज में साम्प्रदायिकता दिन-प्रति-दिन तीव्र गति से बढ़ने लगी। विभाजनोपर्व हिन्दू और मुसलमान जो लम्बे समय से मिलजुल कर रहता थे, एक-दूसरों से दूर-दूर जाने लगे। विदेशी हुकूमत अपनी चालबाजी में सफल हो रही थी। अंग्रेजों की चालबाजी भारत विभाजन को प्रोत्साहित कर रही थी। अनुभवों की तहरीर और तासीर राही मासूम रज़ा को कलम पकड़ने के

लिए मजबूर करने लगी। इसी मजबूरीवश राही मासूम रज़ा ने 'आधा गाँव' उपन्यास लिख दिया। गंगौली इस उपन्यास का एक गाँव है, जिस में शिया मुसलमानों तथा अन्य धर्म के लोगों के ग्रामीण जीवन की झलक मिलती हैं 'आधा गाँव' उपन्यास अपने काल के समाज के संघर्षों, जटिलताओं, आकांक्षाओं, समस्याओं और अन्तर्विरोधी पीड़ा का सशक्त प्रस्तुतीकरण करता है। 'ऊँघता शहर' गाजीपुर के गंगौली गाँव में गंगा की लहरों के तट पर मुसलमानों का अज्ञान देना, हिन्दुओं का गंगा मैया को चढ़ावे चढ़ाना, गंगौली गाँव में कड़ियों का मर जाना, बच्चों का जवान होना, नये बच्चों का पैदा होना, गंगौली वासियों की संख्या में कमी का आना, उत्तरी और दक्षिण पट्टीवालों में साम्प्रदायिक भेद-भाव उत्पन्न होने लगा। सम-सामयिक परिस्थितियाँ स्पष्ट करती हैं कि समाज में लगातार भारतीय मूल्यों का हनन होने लगा था। मानव जाति के अनैतिक व्यवहार ने समाज को कलुषित कर दिया था। सत्य, सदाचार, पाप-पुण्य की परिभाषाएँ प्रतिपल बदलने लगी थी। धर्म के नाम पर साम्प्रदायिकता का नंगा नाच होने लगा था। मानवतावादी सोच और समझ तो पंख लगाकर गंगौली गाँव से उड़ गई थी। हिन्दू-मुसलमान राजनीति का समाज और आपसी सम्बन्धों पर प्रत्यक्ष प्रभाव नज़र आने लगा था। एक कश्मीरी ब्राह्मण का इमाम हुसैन का साथ शहीद होना, साम्प्रदायिकता को एक बहुत बड़ी चुनौती थी। मियाँ लोगों का ताजियाँ पर साम्प्रदायिक बवाल खड़ा करना, आपसी द्वेष का प्रमाण था। मौलवी जैसे, अच्छे रसूक वालों का औरत के शारीरिक ढाँचे को अपनी हवस भरी आँखों से देखना और जुबां पर मिठास या नमकीन के स्वाद को लेकर आना, 'गाथा' अध्याय में पीड़ित भावना को प्रदर्शित करता है। यह सभी कुछ भारतीय सभ्यता संस्कृति और हमारी गंगा-यमुनी तहजीब पर प्रश्न चिह्न लगाता था। ताजिए पर झगड़े के कारण गंगौली वासियों की धार्मिक आस्था को चोट पहुँचाने लगी थी। हिन्दुओं और मुसलमानों के द्वन्द्ववात्मक परिप्रेक्ष्य का राजनीति और समाज पर सीधा असर पड़ने लगा था। उपन्यास की पात्र छिकुरिया अपने द्वन्द्ववात्मक परिप्रेक्ष्य का प्रदर्शन करती 'गाथा' अध्याय में बोल उठती कि "आकिस्तान-पाकिस्तान, हम ना जनतेई"।[3] विरोधाभास में मिगदाद मियाँ अपने भावों को अभिव्यक्त करते कहते हैं कि "पाकिस्तान बन जाय दे, बढ़ा मज़ा आयी"।[4] गंगौली गाँव के दानों समुदायों में साम्प्रदायिकता का प्रत्यक्ष प्रदर्शन होता है। कुछेक पाकिस्तान के निर्माण पर चिन्तित लगते हैं यद्यपि वे सभी भी इस्लाम के समर्थक होते पाकिस्तान निर्माण का समर्थन करते हैं। इस उपन्यास में उपन्यासकार स्वयं एक पात्र की भूमिका को निभाता हुआ, भारत विभाजन की पीड़ा का दुखांत आम लोगों के सामने पेश करता है। गंगौली गाँव को केन्द्र-बिन्दु मान कर

विभाजनोपूर्व और विभाजनोपरान्त विभाजन की पीड़ा का जनमानस को एहसास करवाया गया है। मुस्लिम लीग की सत्ता प्राप्ति के लिए, तृष्णा लगातार बढ़ती जा रही थी। जिन्ना द्वारा 'द्विराष्ट्रवादी-सिद्धान्त' का प्रतिपादन किया जा रहा था। हम्माद मियाँ सत्ता की प्यासी भावनाओं से जवाद मियाँ से कहता है कि "मैं तो मुसलिम लीग को वोट दूँगा"।[5] समय के काल चक्र के साथ-साथ गंगौली गाँव भी लगातार बदलता जा रहा था। लोग द्विराष्ट्रवादी नीति का समर्थन करते अलीगढ़ को भी पाकिस्तान में ले जाने की बातें करने लगे, "अच्छा, ई बताइए की अलीगढ़ पाकिस्तान चला जइये की हिंअई रहिये?"[6] राजनीतिक पहलुओं को उठाकर सत्ताधारी वर्ग ने समाज में साम्प्रदायिकता भरा उन्माद उत्पन्न कर दिया था। धर्म और मजहब की आड़ में दोनों समुदाय एक-दूसरे को उकसाने लगे थे। उन्मादकारियों का माना था कि अगर पाकिस्तान नहीं बना तो आठ करोड़ मुसलमान भारत में हिन्दुओं के गुलाम बन कर रह जायेंगे।[7] भारत विभिन्न जातियों, धर्मों एवं समुदायों वाला गुलाम राष्ट्र था। स्वार्थी हितों की पूर्ति के लिए लगातार विषादों और विवादों को बढ़ावा मिलने लगा। सामान्य जनमानस को भ्रमित कर आतंकित इस लिए किया जा रहा था कि स्वाधीनता प्राप्ति के तुरन्त पश्चात् मुसलमानों की मां-बहन के साथ अमानवीय, असभ्य व्यवहार किया जायेगा। फैल रहे, इस अपवाद ने भारतीय मुसलमानों को पीड़ित और चिन्तित कर दिया। फलस्वरूप मानसिक द्वन्द्व और बेचैनी से मुक्ति नहीं मिल रही थी। मुसलमान एक ही साथ दो अवस्थाओं में रह रहे थे। जिस में कम-या-अधिक वे स्वयं को अजनबी बनना रहे थे।[8] सभी मुसलमान कश्मकश की द्वन्द्ववात्मक मनोदशा में फसे हुए थे। यही कारण है कि राजनीति में दिलचस्पी न लेने वाले भी अपवादों से उत्तेजित होकर अलग-राष्ट्र की माँग करने लगे। विवेच्य उपन्यास के पात्र कहते हैं, "लेके रहेंगे पाकिस्तान। इनकिलाब जिंदाबाद"।[9] उपन्यासकार स्वयं मुसलमान होते हुये भी पाकिस्तान निर्माण का विरोध करता है। गंगौली को अपना घर मान कर मक्का और काबा को अल्लाह का घर मानता है। राही मासूम रज़ा 'आधा गाँव' उपन्यास के माध्यम से साम्प्रदायिकता के खिलाफ अपनी आवाज़ भी बुलन्द करने में सक्षम है। दिलदार नगर और गहमर के हिन्दुस्तानी राजपूत मुसलमान भगवान श्रीराम की खड़ाईओं को कदमे रसूल मानने वाले भारत विभाजन के लिए मुस्लिम लीग को वोट देने लेगे थे। साम्प्रदायिक भाव के कारण सत्ता की प्राप्ति के लिए, भारतीय मुसलमान दो भागों में बँट गए थे। देश का विभाजन और धर्म का संकट सभी को भीतर-ही-भीतर से पीड़ित कर रहा था। धार्मिक वैभिन्य के फलस्वरूप मुसलमानों ने लड़ना और लड़ाना, मरना और मारना, अपनी स्वाभाविक प्रवृत्ति बना ली

थी। धर्म के वास्तविक स्वरूप से स्वयं को अलग रखकर शिया परिवार के लोग व्यवहारिक स्तर पर परंपरावादी, रूढ़िग्रस्त और जड़तापूर्ण जीवन जी रहे थे, जिसमें न सामाजिक चेतना थी, और न धार्मिक अथवा आध्यात्मिक जिज्ञासा। [10] उपन्यास की औरतें लीग के सदस्यों की नारे बाजी सुन कर हँस पड़ती हैं। उपन्यास का यह वाक्यांश स्पष्ट करता है कि सभी भारतीय मुस्लिम पाकिस्तान के पक्षधर नहीं थे। बुद्धिजीवी वर्ग कायदे आजम जिन्ना को पैगंबर नहीं मानते, संशय कर लोग जिन्ना के समर्थक जिन्ना को चमन में पैदा हुआ दीदावर और शेर भी कहते हैं। फुन्नन मियाँ जैसा मुसलमान आर्थिक तंगी के कारण पेट की आग बुझाने पर चिन्तित है, वह पाकिस्तान के मुद्दे की बजाए जुलाहा होने पर चरखी को अधिक महत्त्व देता है। मौलवी बेदार जैसा पात्र लगातार साम्प्रदायिकता को बढ़वा देता कहता है, "सुन रहे कि ई हरममज्जे हिंदू मुसलमानों के घरों में घुस-घुस कर कतल कर रहे हैं"। [11] आतंकित माहौल पैदा करने वाली हवाओं की लपटें लगातार बढ़ती जा रही थीं। लोग मार-काट से पैदा होने वाले हालातों से पीड़ित थे। अफवाहें जंगल की आग की तरह फैल रही थीं। भेदभाव, फिरकापरस्ती के कारण लोग मजहब और तहज़ीब के नाम पर लोगों को पीड़ा पहुंचाने लगे। मौलवी बेदार जैसा पात्र गाजीपुर के हालात बिगाड़ने पर तुला हुआ था। आतंक भरी सूचनाएँ सब से पहले उसी के पास से आती थीं। उपन्यास में वह अपना वक्तव्य रखता कहता है, "अब देख ल्यों। कलकत्ते में बलवा भया। छपरे में भया। दू-चार दिन में गाजीओपूर में हो जय्यहे"। [12] माँग पाकिस्तान को एक इस्लामी देश बनाने की थी, इसी लिए सभी भारतीय मुसलमान भी पाकिस्तान के विषय को लेकर विशेष रुचि ले रहे थे। यद्यपि भारत में अपनी पुश्तैनी सम्पत्ति को छोड़ कर कोई नहीं जाना चाहता था। धीरे-धीरे 'मादरे-वतन' से लगाव कम होने लगा। कड़्यों का अपने पुश्तैनी मुल्क भारत के प्रति भी लगाव कम न होता नज़र आता है। [13] उपन्यासकार ने पाकिस्तान जाने के विरुद्ध अपने कथन को तर्क के माध्यम से प्रस्तुत किया है। मोहर्रम में इमाम हुसैन हिन्दुस्तान आते हैं। इस साल उनसे मुलाकात करके पूछूँगा कि सच बोलने की सज़ा आदमी को कब तक मिलती रहेगी। स्वयं राही मासूम रजा पाकिस्तान जाने को तैयार नहीं था। यही कारण है कि विभाजनोपरान्त भी वह भारत में ही रहा। धर्म के ठेकेदारों और सत्ता के दावेदारों ने पाकिस्तान निर्माण के लिए बंगाल, बिहार और पंजाब में मार-काट आरम्भ कर डाली। उपन्यास का पात्र परुरसाम परेशान होकर कहता है, "इन सांप्रदायिक बलवों ने परेशान कर दिया है। समझ में नहीं आता कि इंसान पागल क्यों होता जा रहा है"। [14] स्वामी नामक पात्र भी हिन्दुओं को धर्म के नाम पर पौराणिक गाथा सुनाता है। गंगा और यमुना के तट

से मलेच्छों का सफाया करने के लिए उकसाता है। स्वामी भी धर्म संकट की बात करता, भारत की पवित्र भूमि को मुसलमानों के खून से घोने के लिए हिन्दुओं को प्रेरित करता है। अत्याचारियों ने अपनी गोद में पाली बच्चियों के साथ बलात्कार किये। उनके मकान अग्नि को भेंट चढ़ा दिये। मिगदाद नामक पात्र मार-काट की क्षोभ को व्यक्त करता कहता है, "आजकल घर के निकले का ज़माना ना है। मार मार-काट मची है। पाकिस्तान बन जाये से त मार-काट अउरो बढ़ गयी हैं। बड़ी आफत है, साहब, अब त रेल रॉक-रॉक के आदमी मारे जा रहें। लाख-डेढ़ लाख से कम आदमी ना मारे गये हों"। [15] ऐसे वक्तव्यों से भारतीय मुसलमानों की मानसिकता भी उघड़कर सामने आती है। उपन्यास में मुस्लिम समाज के सामाजिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक जीवन का चित्रण किया गया है। दिल्ली और अमृतसर के बीच रेल रोक-रोक कर लूट-पाट और मार-काट की गयी। चारों ओर आग की लपटों ने शहरों और घरों समेत इन्सानों को तिनके की तरह जला कर राख कर डाला। दिल्ली, लाहौर, अमृतसर, कलकत्ता, ढाका, चटगाँव, सैदपुर, रावलपिण्डी, लालकिला, जामा मस्जिद, श्री हरिमन्दिर साहिब, जलियांवाला बाग, हाल बाज़ार, उर्दू बाज़ार, अनारकली बाज़ार की सड़कों पर मन्दिरों और मस्जिदों में मृतकों की लाशें पड़ी थीं। मृतकों के नंगे बदन पर नाखूनों और दांतों के निशान साफ-साफ नज़र आ रहे थे। इस दृश्य को देख कर उपन्यासकार पीड़ित होकर कहता है, "मदीना दिल्ली था। मदीना लाहौर था। मदीना हिन्दुस्तान था। मदीना पाकिस्तान था-और मदीना ही लुट रहा था"। [16] आज मुस्लिम समाज के लिए, आत्ममंथन का समय था। इस्लाम के नाम पर कत्लेआम उचित नहीं था। इस्लाम का शाब्दिक अर्थ ही आज्ञापालन, आत्मसमर्पण और शान्ति स्थापित करना है। [17] तो फिर मजहब के नाम पर जीवित इन्सानों की हत्या क्यों? अन्ध धर्म भीरूता को दर्शाती अन्ध धर्म भीरूता मुस्लिम समाज की पहचान को संकट में ढकेल रही थी, क्योंकि किसी ने भी दिल्ली और लाहौर जैसे मदीने को बचने का प्रयास नहीं किया। मुसलमान-ही-मुसलमानों को गले लगाने से इन्कार करने लगे। मुस्लिम समाज की इस सच्चाई को हिन्दी के मुस्लिम उपन्यासकारों ने अपने उपन्यास साहित्य में गहराई से अंकित किया है। राजनैतिक मुखौटेबाजी का पर्दाफाश करते, विवेच्य उपन्यास के पात्र पीड़ा को व्यक्त करता कहता है, "पाकिस्तान बने के वास्ते ओट दें हिआँ के मुसलमान, अउर जब पाकिस्तान बने त जिनवा कहे, की हिआँ के मुसलमान जायें चूल्हे-भाड़ में"। [18] आलोच्य उपन्यास का पात्र फुन्नन अपने वक्तव्य को प्रमाणित करता कहता है कि सत्ता की लालसा के कारण अमीर, पढ़े-लिखे मुसलमानों ने साधारण

हस्ती वाले मुसलमानों का पूर्ण रूप से शोषण किया। मुस्लिम लीग के सदस्यों में स्वार्थी भावना स्पष्ट रूप में नज़र आ रही थी। निम्नवर्ग के मुसलमानों को सरहद पार करने से पहले ही काट दिया गया था। आज़ादी और जन्नत की इच्छा ने घर से बेघर कर दिया। मुस्लिम लीग ने अपना कोई भी वायदा पूरा नहीं किया। जो विभाजनोपूर्व आवाम से किये गये थे। शरणार्थी इधर से उधर सूखे पत्तों की भान्ति टहनियों से टूट कर बिखर गए। यही कारण है कि विस्थापन की प्रक्रिया बीसवीं शताब्दी की सब से बड़ी करुणामयी घटना बन कर रह गई। राजनैतिक संघर्षों के फलस्वरूप हो रहा विस्थापन एक दुखद उन्माद बन कर सामने आया। सामान्य जनमानस पर विस्थापन की पीड़ा का गहरा प्रभाव दिखाई देने लगा। आलम यह था कि अपनी ही रगों का खून पाकिस्तान में मारा-मारा फिर रहा था।[19] विभाजनोपरान्त विस्थापन के पश्चात् पलायन किये लोग, अपने से बिछुड़ों को खोजने लगे थे। विभाजन की पीड़ा के कारण पारिवारिक-सम्बन्ध टूट कर खण्डित हो गए। कुछेक लोग बड़ों को बिना बताये ठंगा दिखला कर पाकिस्तान चले गये।[20] चाहे उनको उस पार जन्नत की प्राप्ति नहीं हो पायी, विस्थापन पाने के लिए भारतीय मुसलमान मोहाजिर बन कर घायल पंक्षियों की तरह फड़-फड़ाने लगे। विभाजनोपरान्त शोषण और भ्रष्टाचार ने सभी की कमर तोड़ कर रख डाली। भ्रष्टाचार और धोखेबाजी के कारण हम्माद मियाँ ने शहर के एक दुकानदार से परसराम पर अदम-अदायगी-ए-कर्ज़ और चारसौ बीसी का मुकदमा कायम करवा दिया।[21] धीरे-धीरे से लोगों के दिलों-दिमाग से संवेदनशीलता समाप्त हो गई। आँखों देखे आतंकित माहौल ने विस्थापितों को पीड़ित कर रखा था। संत्रास के कारण आम आदमी की व्यग्रता बढ़ने लगी। विभाजन की पीड़ा सभी को दुखी करने लगी। पाकिस्तान निर्माण ने भारतीय मुसलमानों की स्थिति दयनीय बना डाली। भारतीय मुसलमानों को संशय की निगाहों से देखा जाने लगा। विभाजन की पीड़ा झेल रहे लोग धर्म लोक की मान्यताओं में फस गये। हज़ारों वर्ष भारत की सभ्यता-संस्कृति में साँस लेते आ रहे मुसलमान पल भर में पराये हो गये। परायेपन का प्रभाव भारतीय सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन पर साफ-साफ दिखाई पड़ने लगा। भारतीय स्वाधीनता की प्राप्ति हेतु हिन्दू और मुसलमानों ने मिल कर संघर्ष किया था। फिर दोनों समुदाय अलग-अलग क्यों हो गये ? यह बात सभी को चिन्तित करती है। इस अलगाववाद का प्रमुख कारण पाकिस्तान की माँग थी। शिया और सुन्नी में भेदभाव क्यों और कैसे बढ़ा? मोहाजिरों को पाकिस्तान पहुँच कर भी जन्नत की प्राप्ति क्यों नहीं हुई? लीग की बयानबाजी के कारण ठगे गये लोग अपना मोहभंग होने के पश्चात् भारत वापसी क्यों करने लगे? सभी प्रश्नों के जवाब बुद्धिजीवी वर्ग और मुस्लिम लीग से

मिलने चाहिए थे परन्तु दोनों तरफ के लोग इस विषय पर चुप्पी साध गये। सभी समस्याओं को बौद्धिक शक्ति से हल करने के बाद भी असफलता हाथ लगने लगी। हिन्दुओं और मुसलमानों के सदियों पुराने रिश्तों में दरारें पड़ने लगी।[22] 'आधा गाँव' में मुसलमानों की कुंठित मानसिकता भी उधड़ कर सामने आने लगी। मुसलमानों को भारत का मूल नागरिक न मान कर संशय किया जाने लगा। धर्म की आड़ के कारण अनपढ़ रहने मुसलमानों का सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक जीवन ऊँचा नहीं उठ पाया। परमानन्द श्रीवास्तव का माना है कि, "आधा गाँव पहला उपन्यास है, जिस में हिन्दू मुसलमानों की द्वन्द्ववात्मक वास्तविकता को इतने तीखे ढंग से ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में पारिभाषित करने की सार्थक कोशिश की गई है"।[23] विभाजन की शुरुआत सिन्ध से हुई। 50000 हज़ार औरतों का शारीरिक शोषण किया गया। बंटवारे के समय 1.45 करोड़ लोग विस्थापित हुये।[24] औरतों का तो विभाजन से कुछ भी लेना देना नहीं था। फिर औरतों को ही विलासी भूख का शिकार क्यों बनाया गया। आतंक के भय कारण अन्तर्जातीय विवाहों ने समाज का 'ताना-बाना' हिलाकर रख दिया। ओजस्वी भाषणों के प्रभाव के वश में आकर बीभत्सता के संकेत मिलने लगे। उदासीनता से साहित्य लिखा जाने लगा। आज़ादी का सुखद स्वप्न कभी न भूलने वाली त्रासदी बन गया। देश की आज़ादी और विभाजन ने मुसलमानों के जीवन में ऐसा विक्रोभ पैदा कर दिया, जिस से मुसलमान अभी तक उभर नहीं पाये।[25] पढ़े लिखे मुसलमानों के विभाजनोपरान्त पाकिस्तान चले जाने से बची कौम सच्ची देश भक्ति और राष्ट्रीयता का परिचय देने लगी। मध्यवर्गीय मुस्लिम परिवारों की घरेलु जिन्दगी का प्रामाणिक और मार्मिक चित्र पेश होने लगा। संयमहीनता, इस उपन्यास की सबसे बड़ी खासियत है। फलस्वरूप उपन्यास के सभी पात्र बेलगाम होने के कारण अधिक पीड़ा भोग रहे हैं। राही मासूम रज़ा द्वारा उपन्यास के पात्रों का बहुआयामी चित्र पेश किया गया है। भारतीय समाज के सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक जीवन को उकेरने में राही मासूम रज़ा को अद्भुत सफलता प्राप्त हुई है। सच में 'आधा गाँव' विभाजनोपरान्त मानवीय हृदय की पीड़ा को व्यक्त करने का एक शानदार दस्तावेज़ है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ. शशि भूषण सिंहल 'हिन्दी उपन्यास की प्रवृत्तियाँ' विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा, संस्करण-1988 पृष्ठ संख्या 1
2. Vipin Chandra, 'Communalism in Modern India' page No.12 (Simply put communalism is the belief that because a group of people

- follow a particular religion they have, as a result common social, political and economic interests.)
3. राही मासूम रज़ा, 'आधा गाँव' राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण-2017 पृष्ठ संख्या 174
  4. राही मासूम रज़ा, 'आधा गाँव' राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण-2017 पृष्ठ संख्या 179
  5. राही मासूम रज़ा, 'आधा गाँव' राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण-2017 पृष्ठ संख्या 213
  6. राही मासूम रज़ा, 'आधा गाँव' राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण-2017 पृष्ठ संख्या 239
  7. राही मासूम रज़ा, 'आधा गाँव' राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण-2017 पृष्ठ संख्या 239
  8. Rebert E Park-Journal Article 'Human Migration and Marginal man' American Journal Sociology, The University Press of Chicago Vo XXXIII NO.6 May 1982 page No.881
  9. राही मासूम रज़ा, 'आधा गाँव' राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण-2017 पृष्ठ संख्या 246
  10. डॉ. मुहम्मद फीरोज खान, 'मुस्लिम समाज और हिन्दी उपन्यास' अनंग प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण-2003 पृष्ठ संख्या 205
  11. राही मासूम रज़ा, 'आधा गाँव' राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण-2017 पृष्ठ संख्या 263
  12. राही मासूम रज़ा, 'आधा गाँव' राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण-2017 पृष्ठ संख्या 267
  13. डॉ. मुहम्मद फीरोज खान, 'मुस्लिम समाज और हिन्दी उपन्यास' अनंग प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण-2003 पृष्ठ संख्या 197
  14. राही मासूम रज़ा, 'आधा गाँव' राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण-2017 पृष्ठ संख्या 270
  15. राही मासूम रज़ा, 'आधा गाँव' राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण-2017 पृष्ठ संख्या 282
  16. राही मासूम रज़ा, 'आधा गाँव' राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण-2017 पृष्ठ संख्या 283
  17. श्री नामदेव, 'भारतीय मुसलमान हिन्दी उपन्यासों के आईने में' अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नयी दिल्ली संस्करण-2009 पृष्ठ संख्या 105
  18. राही मासूम रज़ा, 'आधा गाँव' राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण-2017 पृष्ठ संख्या 284
  19. राही मासूम रज़ा, 'आधा गाँव' राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण-2017 पृष्ठ संख्या 292
  20. राही मासूम रज़ा, 'आधा गाँव' राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण-2017 पृष्ठ संख्या 334
  21. राही मासूम रज़ा, 'आधा गाँव' राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण-2017 पृष्ठ संख्या 338
  22. डॉ. कुँवरपाल 'हिन्दी उपन्यास जनवादी परम्परा' पृष्ठ संख्या 160
  23. श्री परमानन्द श्रीवास्तव, 'उपन्यास का यथार्थ और रचनात्मक भाषा' पृष्ठ संख्या 80
  24. Ministry of External Affairs Govt. of India Delhi, 'Recovery and Restoration of abducted People Edition 1948 page no. 6

25. डॉ. गोपाल राय, 'हिन्दी उपन्यास का इतिहास'
राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. दरियागंज, नयी दिल्ली,
संस्करण-2010 पृष्ठ संख्या 404
-

Corresponding Author

Pardeep Kumar*

Research Scholar, Gurukashi University, Talwandi
Sabo, Bathinda, Punjab